है। कुछ दार्शनिकों के मत में अहंता का पूर्ण त्याग करना होगा। परन्तु ऐसा करना सम्भव नहीं, क्योंकि अहंता का अर्थ है 'स्वरूप'। देह के आत्मभाव को तो त्यागना ही है।

जन्म, मृत्यु जरा और व्याधि की दुःखरूपता का बारम्बार चिन्तन करना चाहिये। वैदिक शास्त्रों में जन्म के दुःखों का वर्णन है। श्रीमद्भागवत में जन्म से पूर्व के संसार का, मातृगर्भ में बालक के निवास का और वहाँ मिलने वाले दुःखों का बड़ा सजीव चित्रण है। यह गम्भीरतापूर्वक समझ लेना आवश्यक है कि इस संसार में जन्म होना परम दुःखमय है। मातृगर्भ के भीषण दुःख को भूल जाने के कारण ही हम बारम्बार जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्ति के लिए कोई साधन नहीं करते। जन्म की भाँति, मृत्युकाल में भी बहुत सी यन्त्रणायें भोगनी पड़ती हैं, जिनका प्रामाणिक शास्त्रों में उल्लेख है। इन पर अवश्य विचार करना चाहिए। रोग और वृद्धावस्था का व्यावहारिक अनुभव सभी को है। रोग अथवा जरा से कोई पीड़ित नहीं होना चाहता, फिर भी इनका निवारण नहीं किया जा सकता। जब तक मनुष्य जन्म, मृत्यु, जरा और व्याधि के दुःखों को विचार कर विषयपरायण जीवन से निराश नहीं हो जाता, तब तक पारमार्थिक उन्नति का पथ प्रशस्त नहीं हो सकता।

पुत्र, स्त्री और घर आदि में अनासक्ति—**अनभिष्वंगः** का यह अर्थ नहीं कि इनके प्रति निष्ठुर हो जाय। ये सभी स्वाभाविक स्नेह के पात्र हैं; किन्तु परमार्थ के प्रतिकूल होने पर इनमें आसक्ति को बिल्कुल त्याग देना चाहिए। कृष्णभावना घर को सुखमय बनाने की सर्वोत्तम विधि है। पूर्णतया कृष्णभावनाभावित गृहस्थ इस सुखसाध्य साधन के द्वारा अपने घर-परिवार में परम सुख का विस्तार कर सकता है। इसके लिए चार साधनों की अपेक्षा है: **हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे, हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे** महामन्त्र का कीर्तन, कृष्णप्रसाद-सेवन, श्रीमद्भागवत और भगवद्गीता की वार्ता करना और मूर्तिपूजा। इन चार साधनों को करने वाला पूर्ण सुखी हो जाता है। बन्धु-बांधवों को भी इस भक्तियोग में शिक्षित करना चाहिए। सम्पूर्ण परिवार प्रातः और सायंकाल समवेत स्वर से **हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे, हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे** महामन्त्र का कीर्तन करे। यदि अपने पारिवारिक जीवन को इस प्रकार ढाला जा सके, जिससे इन चार साधनों के द्वारा कृष्णभावना की निरन्तर वृद्धि होती रहे, तो गृहस्थ आश्रम से संन्यास लेना आवश्यक नहीं। परन्तु यदि पारिवारिक जीवन परमार्थ के अनुकूल न हो, तो उसको त्याग देना चाहिए। श्रीकृष्ण की प्राप्ति अथवा सेवा के लिए अर्जुन के समान सर्वस्व त्याग कर देना चाहिए। प्रारम्भ में अर्जुन अपने सम्बन्धियों से युद्ध नहीं करना चाहता था; पर जब उसे बोध हुआ कि ये सम्बन्धी उसकी कृष्णप्राप्ति में बाधक हैं, तो श्रीकृष्ण के उपदेश के अनुसार युद्ध में अपने सब सम्बन्धियों का वध करने में उसने तनिक भी संकोच नहीं किया। सभी अवस्थाओं में पारिवारिक जीवन के दुःख-सुख से बिल्कुल अनासक्त रहना चाहिए, क्योंकि इस संसार में कोई भी पूर्ण रूप से सुखी अथवा